"भारतीय गृह्यसूत्रों में वैवाहिक परम्परा एवं विधि–विधान"

अभय शंकर तिवारी*

हिन्दू धर्म शास्त्रों में हमारे सोलह संस्कार बताये गये हैं। इन संस्कारों में सबसे महत्वपूर्ण संस्कार है – **"विवाह संस्कार"**

गृहस्थ जीवन के विशद वर्णन के लिए गृह्यसूत्रों का अपना महत्वपूर्ण स्थान रहा है।

'गृह्य' शब्द गृह धातु में **'ल्यप'** प्रत्यय लगाने से निर्मित हुआ हैं।

यह शब्द मूलतः **'गृहस्थवासी'** हैं।

गृह्यसूत्र, गृहस्थों के उपयुक्त कर्मों का संक्षेप में विधान वाचक हैं।

'खादिर'– गृह्यसूत्र में उल्लिखित है कि जिस अग्नि में विवाह कार्य सम्पन्न हो, उसी को **'गृह्याग्नि'** कहते हैं।

'गृह्याग्नि' का दूसरा नाम 'औपासनाग्नि', 'आवासथ्याग्नि' और 'शालाग्नि' है।

जिसका विचार पारस्कर–गृह्यसूत्र से स्पष्ट हो जाता है। यथा– **"गृह्ये स्थाली पाकानां कर्म"**।

अर्थात्– अग्निहोत्र की आग में पकाये गये एक धार्मिक कृत्य, जिसका अनुष्ठान गृहस्थ्य करते हैं।

अग्निहोत्र की आग को स्थापित रखना प्रत्येक गृहस्थ विहित कर्म हैं।

उस कर्म का जिस शास्त्र में विधान हो, विधिवत उल्लेख हो और गृहस्थ जीवन से सम्बन्धित सभी कर्मकाण्डों का विवेचन हो वही **'गृह्यसूत्र'** है।

गृह्यसूत्रों में संस्कारों का वर्णन प्रधान होने पर भी अनेक सामाजिक प्रथाओं और रीति–रिवाजों के वर्णन हैं।

पंच महायज्ञ, श्राद्धकर्म, आभिचारिक क्रियाओं के भी वर्णन हैं। वार्षिक कर्मों का निरूपण भी गृह्यसूत्रों में पाया जाता हैं।

यथा– सर्प बलि, पृथ्वी पर शयन का आरम्भ, नये अन्नों के समय प्रयोग किये जाने वाले कर्म, अण्टका कर्म, पितृ कर्म आदि।

शोधछात्र प्राचीन साहित्य बी ब0 सिं0 पूर्वांचल विश्वविद्यालय जौनपुर उ0 प्र0

वर्षिक कर्मों के अतिरिक्त कुछ ऐसे भी विधान गृह्यसूत्रों में वर्णित है। जैसे– घर बनाने के लिए भूमि का चुनाव, घर बनाने की विधि स्तम्भ रखने की तिथि या विधि इत्यादि। ये सभी क्रियाऐं गृहस्थ जीवन से सम्बन्धित है और गृहस्थ जीवन का आधार है– **'विवाह'।**

1. **खादिर गृ0 सू0 ऽ/।/।**

"यस्मिन्नग्नौ पाणिं गृहणीयात् स गृह्यः!"

'विवाह संस्कार' के विषय में भवभूति की मान्यता है कि वधू और वर में पारस्परिक अनुराग विवाह कर्म में उत्तम एवं मंगल हैं।

इसकी पुष्टि **'मालतीमाधव'** में महर्षि अंगिरा के इस कथन से की गई है– 'जिस कन्या में (चरित्र लावण्यादि के कारण) मन और नेत्रों की आसक्ति है, उससे विवाह करने से समृद्धि हैं।

महाकवि की कृतियों में, कण्कण धारण, कण्कण मोक्षण, पाणिगृहण आदि विवाह संस्कार की अनेक क्रिया–विधियों का उल्लेख मिलता हैं।

भारतीय इतिहास में एक मान्य सामाजिक संस्था के रूप में विवाह संस्कार का विवरण हमें भारत के नहीं, बल्कि विश्व के सर्वप्रथम लिखित ग्रंथ ऋग्वेद (642X85) में मिलने लगता हैं।

'विवाह' के बाद पति और पत्नी दोनों का गृहस्थ जीवन में बराबर का योगदान रहता हैं। पति अपने परिवार के हित कामना के लिए सदैव तत्पर रहता है और पत्नी भी गृहस्वामिनी होती हैं।

'पाणिग्रहण' संस्कार के बाद ही **'नारी'** शब्द का प्रयोग उपलब्ध होता हैं। इससे पूर्व **'कन्या'** के लिए कही भी **'नारी'** शब्द का प्रयोग न ही प्राप्त होता है और न ही समाज द्वारा स्वीकृत था। सर्वप्रथम **'लाजा होम'** के समय कन्या अपनी पूर्णावस्था का परित्याग कर अपने को **'नारी'** की अवस्था में डालती हुई अपने लिए **'नारी'** शब्द का प्रयोग करती हैं।

'मैं नारी हूँ, मैं अपने नर की अर्द्धांगिनी हूँ।'

'मेरे सहयोग के बिना नर अपने जीवन के मांगलिक कार्यों में सुचारू रूप से सफल नहीं हो सकता अर्द्धनारीश्वर की कल्पना मेरे सहयोग के बिना अधूरी है, उच्चादर्शों के धरातल पर खड़ी होकर नारी उद्घोष करती हैं– **'आयुष्मानस्तु मे पतिः–एधन्तां ज्ञातयो मम !**

इस प्रकार विवाह के बाद जहाँ पति मुखिया के रूप में सम्पूर्ण गृहस्थी का संचालक होता है वहीं पत्नी को भी वैदिक युग में अत्यन्त आदरणीय स्थान प्राप्त था।

"पत्नी ही गृह है, गृहस्थी है, कल्याण है, आनन्द है, आदि मंत्र ऋग्वेद में मिलते है, क्योंकि वहीं उनके सुन्दर गृह, आनन्द तथा कल्याण की विधातृ होती थी।"

'जाये दस्तम्' (= पत्नी ही घर है)

'गृहणी गृहमुच्यते्' (= गृहणी ही घर है की उत्तम भावना वैदिक युग में प्रौढ़ता को प्राप्त कर चुकी थी।

इस युग में विवाह एक पवित्र धार्मिक संस्कार एवं बन्धन माना जाता था और आजतक हमारे हिन्दू धर्म में विवाह की वही मान्यता हैं।

श्रीरामचरित मानस के बालकाण्ड में भी तुलसी दास जी ने विवाह के सम्बन्ध में बड़ा रोचक प्रसंग उठाया हैं।

'विवाह' से पूर्व कन्या के लिए गौरी शब्द का प्रयोग होता है। **'विवाह'** योग्य होने पर कन्या अपना मनचाहा वर प्राप्त करने के लिए गणेश जी की पूजा और माँ गौरी की स्तुति करती हुई कहती है–

" हे गौरी शंकरार्धांगिनी !
यथा त्वम् शंकर प्रिया !
तथा मां कुरू कल्याणि
कान्त कान्तां सुदुर्लभाम्" !

इसी प्रकार तुलसी दास जी ने रामचरित मानस के बालकाण्ड में 234 से लेकर 236 नं0 के दोहे तक विवाह के सन्दर्भ का बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया हैं–

"जय–जय गिरिबर राज किशोरी ।[1]
जय महेश मुख चंद चकोरी ।।
जय गजबदन षड़ानन माता।[2]
जगत जननि दामिनि दुति गाता" ।।

और फिर गौरी जी प्रसन्न होकर आशीष देती है कि–

"सुनु सिय सत्य असीस हमारी ।[3]
पूजहि मन कामना तुम्हारी।।
मनु जाहि राचेउ मिलिहि सो वरू
सहज सुन्दर साँवरों ।[4]
करूना निधान सुजान सीलु सनेह
जानत रावरो ।।
एहि भाँति गौरी असीस सुन सिय
सहित हिय हरषी अली ।

तुलसी भवानिहि पूजि पुनि–पुनि
मुदित मन मंदिर चली" ।।[5]

इस प्रकार आज भी हमारे हिन्दू संस्कारों में कन्या विवाह से पूर्व गौरी जी की पूजा करके अपने लिए मनचाहा वर प्राप्ति की कामना करती है और वर भी अपने लिए उच्च कुल की कन्या की कामना करते हुए माँ से प्रार्थना करता है कि–

"पत्नीं मनोरमां देहि मनो वृत्तानुसारिणीम् ।
तारिणीं दुर्गसंसार सागरस्य कुलोद्भवाम्।। अर्गला स्त्रोतम्।। 24।।

इस प्रकार भारतीय विवाह शुभ तिथि और रस्मों–रिवाज के साथ सम्पन्न होता हैं।

ऋग्वेद और अथर्ववेद 3 में कहा गया है कि स्त्री के विवाह से पूर्व तीन देवमय पति होते है और चतुर्थ मनुष्य होता हैं।

ये तीन देवमय पति हैं– सोम, गन्धर्व और अग्नि। यहाँ यह समझना आवश्यक है कि इस प्रसंग में पति शब्द का प्रयोग **'पाति इति पतिः'** अर्थात् रक्षक को पति कहा गया हैं।

विवाह से पूर्व कन्या के तीन देवता रक्षक है और ये अपने–अपने गुण कन्या को देते हैं।

1. **समंगलीरियं वधुः ..... सौभाग्यमस्यै दत्वाय .....**
   ऋ0 – 10/85/33 : अथर्ववेद – 14/2/28/वसु/अ0 – 14/1/25 : ब्रह्मम्यों वि भजा ।
2. **अ0 – 14/2/31**
   सोमस्य जाया प्रथमं ग्रनधर्वस्ते ऽपरः पतिः ।
   तुतीयों अग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्याजाः ।
3. **ऋग– 10/85/40/: सोमः प्रथमो विविदो गन्धर्वो विवद उत्तरः ।**
   तृतीयों अग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्याजाः ।।

इस प्रकार वैदिक युग से ही कन्या और वर विवाह के माध्यम से पति–पत्नी के रूप में गृहस्थ जीवन में प्रवेश करते थे। इससे व्यक्ति अपने परिवार, समाज और स्वयं का विकास करता था, पितृऋण से उऋण होता था। वैवाहिक जीवन समाज में प्रतिष्ठित माना जाता था।

1. बाल विवाह का अभाव था।
2. विवाह की आयु युवक–युवती होने पर ही मानी जाती थी। प्राचीन काल में कई तरह के विवाह प्रचलित थे–

1. महाकाव्य काल में ब्रह्म विवाह श्रेष्ठ माना जाता था। इसमें वयस्क माता–पिता के संरक्षण में विधि–विधान से पुत्र–पुत्री का विवाह होता था।

2. प्रजापत्य विवाह वर की पूजा करके सन्तान हेतु होता था। वस्त्र–आभूषण आदि से सुसज्जित करके कन्या वर को दी जाती थी। जिसे **'कन्यादान'** कहते थे। पिता वर को **धन, हाथी, गाय, बैल** आदि दहेज में देता था।
3. इस काल में आर्ष–विवाह के भी उदाहरण मिलते हैं।
4. आसुर विवाह में कन्या का विक्रय–मूल्य लिया जाता था।
5. गान्धर्व विवाह क्षत्रियों में प्रचलित था। महाभारत काल में दुष्यंत और शकुन्तला का गान्धर्व विवाह हुआ था।
6. राक्षस विवाह में युवक या वर माता–पिता को पराजित कर कन्या से विवाह करता था। श्रीकृष्ण ने रूक्मणी को पराजित कर रूक्मिणी से शादी की थी।
7. स्वयंवर विवाह राजवंशों में प्रचलित था, स्वयंवर विवाह में वर की वीरता, शालीनता, श्रेष्ठता की परीक्षा करके उसमें वर के सफल होने पर उससे राजा अपनी कन्या का विवाह करता था।

   सीता, द्रौपदी, सावित्री, दमयन्ती का विवाह स्वयंवर प्रथा द्वारा हुआ था।
8. अन्तर्जातीय विवाह के भी उदाहरण उस काल में मिलते हैं। अन्तर्जातीय विवाह दो प्रकार के होते थे। अनुलोम और प्रतिलोम।

अनुलोम विवाह की परम्परा भी यत्र–तत्र मिलती है। जब उच्च वर्ण का पुरूष अपने से निम्न वर्ण की कन्या से विवाह करता था तो वह अनुलोम विवाह कहा जाता था। जैसे– वशिष्ठ के पुत्र शक्ति ने वैश्य कन्या अदृश्यन्ती से विवाह किया था।

इसी प्रकार अगस्त्य ऋषि की पत्नी लोपामुद्रा क्षत्रिय वर्ण की थी।

प्रतिलोम विवाह में निम्न वर्ण का पुरूष उच्च कुल की कन्या से विवाह कर लेता था। राजा नीप ने अपना विवाह कृष्णद्वैपायन के पुत्र शुक की कन्या कृत्वी से किया था जो ब्राह्मण कुल की थी। साधारणतः समाज में एक पत्नी का आदर्श था, किन्तु धन–सम्पन्न एवं राजघरानों के व्यक्तियों में बहुपत्नी प्रथा भी प्रचलित थी। राजा दशरथ की तीन रानियाँ थी, भीम की दो पत्नियाँ थी, द्रौपदी और हिडिम्बा।

कृष्ण की 16 हजार पटरानियाँ थी बहुपति का उदाहरण भी मिलता है।

जैसे द्रौपदी के पाँच पति थे

जटिला गौतमी के सात ऋषि पति थे।

रामायण में उल्लेख है कि पति के न रहने पर देवर को पति बनाया जाये। बालि की पत्नी तारा ने बालि–बध के उपरान्त सुग्रीव को अपना पति बनाया।

1. महाभारत में पुत्रवान व्यक्ति की प्रशंसा तथा पुत्रहीन की निन्दा की गई है। अविवाहिता को परलोक वर्जित था महाभारत 9–52
2. सीता तथा द्रौपदी का विवाह युवती होने पर हुआ था

3. सीता इन्दुमती, कुन्ती, सुभद्रा, द्रौपदी आदि के विवाह में बहुत दहेज मिला था।

इस प्रकार प्राचीन काल से ही हिन्दू धर्म में ग्रहयसूत्र के अनुसार वैदिक विधि विधान से वैवाहिक परम्परा चली आ रही है।

अतः विवाह के पश्चात कन्या वधू कहलाती है 'वधू ' शब्द नवविवाहित नारी के लिए प्रयुक्त हुआ हैं

"वहति श्वसुरगृह भारं या सा" अर्थात् जो श्वसुर के घर का भार वहन करने वाली है अथवा

"उह्यते पितृगेहात् पतिगृहम्= वधू"इस पद की निष्पत्ति 'वह' धातु से 'उधुक' प्रत्यय से होती है जिसका सामान्य अर्थ है सहचरी गृहणी। इस प्रकार पिता के द्वारा वर को प्राप्त हुई कन्या वधू कहलाती थी।

वधू का समर्पण केवल वर की सेवा के लिए ही नही था क्योंकि उसके पीछे शाश्वत–सनातन समाज की सेवा का संयुक्त भार रहता था।

क्योंकि विवाह का अर्थ होता है **"विशिष्टो वाह–विवाह"** यही कारण है कि विवाह के पश्चात वर प्रार्थना करता है कि–

"हे विश्वदेव! हम दोंनो (वर–वधू) के हृदयों को सब प्रकार से प्रकाश युक्त करें।**"**

"मातिश्वरा धाता और देष्ट्री (सरस्वती हम दोंनो की बुद्धियों को परस्पर अनुकूल बनायें)**"**

समृेऽअन्तु विश्वेदेवा समापो हृदयानि नौ

सं मातरिश्वा से धाता समु देष्ट्री दधातु नो।

(ऋ0 10/85/47)

अग्निदेव के समक्ष पाणि–ग्रहण करने के पश्चात वर वहाँ उपस्थित लोंगो से प्रार्थना करता है–

"यह वधू सुमंगली है, मंगलमयी है, इसको सब लोग एक साथ देखें और इसे अखण्ड सौभाग्य का आशीर्वाद देकर ही अपने–अपने घर लौटे"। सौभाग्य का आशीर्वाद प्राप्त कर वधू गृह स्वामिनी बनकर वृद्धावस्था तक गृहस्थाश्रम धर्म का पालन करें ।

"पत्यु यज्ञे संयोगो यया" अर्थात यज्ञ में पति के साथ जिसको बैठने का अधिकार प्राप्त था वह पत्नी कहलाती थी। पत्नी–पति की अर्द्धांगिनी मानी जाती थी।

घर के बाहर के कार्यों को पति देखता था तथा गृहणी बनकर पत्नी घर के समस्त कार्य करती थी।

इस प्रकार विवाह एक संस्कार है संस्कार का अर्थ है दोषों का नाश करने वाला तथा गुणों को जन्म देने वाला कर्म। विवाह संस्कार से आत्मा की उन्नति होती हैं। इस संस्कार

के द्वारा पति–पत्नी में होने वाला प्रेम पवित्र होता है।

भारतीय संस्कृति में विवाह गुरू, देव, अग्नि और ऋषि महर्षियों का आशीर्वचन प्राप्त कर उनकी प्रदशिणा एंव सिन्दूर–दान सदृश अति विशिष्ट वैदिक विधियों द्वारा जीवन–पर्यन्त अटूट बन्धन के रूप में संम्पन्न होते है इस प्रकार की एक अन्य विधि पाणिग्रहण की है।

वर वधू का दाहिना हाथ इस मंत्र के साथ पकड़ता है

"मैं तेरा हाथ सौभाग्य के लिए ग्रहण करता हूँ तू मुझ पति के साथ वृद्धावस्था पर्यन्त जीवित(जरदश्टि) रहे।"

भग, अर्यमा, सविता, ने गार्हपत्यके लिए, तुझे मेरे हाथों में सौपां है।

यह मैं हूँ, वो तू हैं, तू वह है, मैं यह हूँ, मैं साम हूँ, तू ऋक् है, मै द्यौ हूँ, तू पृथ्वी है।

आओ हम दोनों विवाह करें ।

1. पा0 गृ0 सू0।
2. अ0 गृ0 सू0 : 14/1/49; अ0 गृ0 सू0 1/4/3/
3. वही।
4. वहीं 1/8/8
5. वहीं ।

पारस्कर और बौद्धायन के गृह्यसूत्रों में वर्णित वैवाहिक विधि–विधान निम्नवत है।

पारस्कर गृह्यसूत्र	**बौद्धायन गृह्यसूत्र**
1.अर्ध्य तथा मधु पर्क	1.वरप्रेक्षण
2. वस्त्र. परिधान	2. ब्राह्मण भोजन
3. समंजन	3. नान्दी मुख भोजन
4. वधू के साथ निस्क्रमण	4. वर का वधू के घर जाना
5. जाना समीक्षण	5. समीक्षण
6. अग्नि प्रदक्षिणा	6. हस्त ग्रहण (पाणि ग्रहण)
7.वैवाहिक होम ,आज्या हुति, राष्ट्र भृतजय तथा अभ्यातन होम	7. सप्तपदी
8. लाजा होम	8. अर्ध्य तथा मधूपर्क
9. पाणि ग्रहण	9. अलंकरण
10. अश्मारोहण	10. अदिप्ति
11. गाथा गान	11. ह्रदय स्पर्श
12. अग्नि परिक्रमण	12. कर्णे जप

13. शेष लाजा होम	13. पाणि ग्रहण
14. शप्तपदी	14. अग्नि प्रदक्षिणा
15. मुर्धा भिशेष	15. आश्मारोहण
16. सूर्य दर्शन	16. पुनः अग्नि प्रदक्षिणा
17. हदय स्पर्श	17. प्रजापत्य तथा अन्य आहुतियाँ
18. अभिमंत्रण	18. उद्या अथवा विदाई
19. वृष चर्म पर बैठना	19. गृह प्रवेश
20. ग्राम वचन	20. वृष चर्म पर बैठना
21. आचार्य को दक्षिणा	21 ध्रुव अरून्धती तथा सप्तर्षि दर्शन
	22. तिरात्र व्रत